INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL
ISSN NO : 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 13 | ISSUE - 7 | AUGUST - 2023

अज्ञेय का काव्य एवं समकालीन काव्य प्रवृत्तियों में प्रगतिवाद का अध्ययन

सर्वेश कुमार पाण्डेय[1] , डॉ. ओम प्रकाश द्विवेदी[2]
[1]शोधार्थी हिन्दी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
[2]सहायक प्राध्यापक हिन्दी, यमुना प्रसाद शास्त्री स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिरमौर, जिला रीवा (म.प्र.)

सारांश –

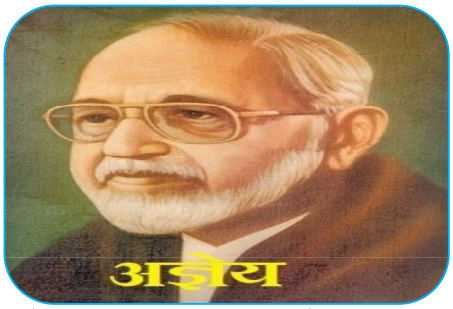

अज्ञेय के काव्य जगत में प्रवेश करने का समय ऐसा समय था, जब राष्ट्र के अंदर परतंत्रता के विरूद्ध संघर्ष और अधिक जोरों पर था। बीस वर्षों के गांधीवादी अहिंसात्मक प्रतीक सत्याग्रहों की एक लंबी कतार के बाद देश की चेतना एक ऐसे कगार पर पहुंच चुकी थी जो अंग्रेजों का शासन और अधिक सहने को तैयार नहीं थी। छुटपुट क्रांतिकारी बिस्फोटों के स्थान पर पूरा राष्ट्र सामूहिक बिस्फोट के लिए दहकने लगा था। सुभाषचंद्र बोस यद्यपि गांधीजी के तरीकों से खुश नहीं थे फलस्वरूप वह देश के बाहर जाने को मजबूर हो गए थे। लेकिन बाहर जाकर भी उन्होंने तत्काल भारतीय स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ने वाली आजाद हिंद फौज का गठन कर लिया था। इन्हीं सब परिस्थितियों से देश के तत्कालीन मनोबल का अनुमान लगाया जा सकता है। जिस प्रकार शीर्षस्थ राजनेताओं की गिरफ्तारी के बाद अगस्त 1942 में देशभर में क्रांति का ज्वार दिखाई देता है, उससे भी इस बात का अनुमान लगाया जा सकता है कि राष्ट्रीय विजय का संकल्प उस समय कितनी ऊंचाई पर पहुंच चुका था। साहित्य के क्षेत्र में भी उस युग के लिए एक विराट व्यक्तित्व की अवतारणा की आवश्यकता हो चुकी थी। इस संघर्षमयी विराट पीठिका के मध्य अज्ञेय के व्यक्तित्व का आविर्भाव हुआ जो निरंतर विकास को प्राप्त होता चला गया।

मुख्य शब्द – अज्ञेय, काव्य, समकालीन एवं प्रगतिवाद।

प्रस्तावना –

आलोचकों की ऐसी मान्यता कि छायावाद की अतिशय सूक्ष्मता, पलायनवादी दृष्टिकोण और कल्पना की प्रतिक्रिया स्वरूप आधुनिक हिंदी काव्य जगत् में प्रगतिवाद का आरंभ हुआ था। लेकिन वह एक साहित्यिक आंदोलन होते हुए भी मूलतः राजनीतिक धरातल पर आश्रित था। कहने का भाव यह है कि चिंतन अथवा राजनीति के क्षेत्र में जिसे साम्यवाद कहते हैं, अनुभूति के क्षेत्र में उसी को प्रगतिवाद कहते हैं। इसी के साथ–साथ आलोचन के दृष्टिकोण से साम्यवादी दर्शन की साहित्यिक तथा भावात्मक अभिव्यक्ति भी इसे कहा जा सकता है। जिसका सीधा संबंध कार्ल मार्क्स की दार्शनिक एवं सैद्धांतिक मान्यताओं से संपृक्त होता है।

मार्क्स के परवर्ती आलोचक का मानना है कि "काव्य की उत्पत्ति समाज से होती है तथा सामाजिक संघर्ष को व्यक्त करना ही काव्य का उददेश्य है।" इस प्रकार प्रगतिवादी साहित्य मार्क्सवादी चिंतन से प्रेरित

समाजोन्मुख साहित्य कहा जा सकता है, जो पूँजीवादी शोषण और अन्याय के विरूद्ध विद्रोह जगाकर वर्गविहीन समाज की स्थापना में विश्वास रखता है।

विश्लेषण –

हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय "तीसरा सप्तक" की भूमिका में सांकेतिक रूप से प्रगतिवादियों की सामाजिक चेतना को स्वीकार करते हुए अपनी यायावरी वृत्ति के कारण निरंतर प्रगतिशील रहे हैं। फलस्वरूप वह रूढ़ियों का विरोध करने वाले और नवीन परंपराओं को अग्रसर करने वाले, भ्रमणशील प्रवृत्ति के अनुकूल गमन करने वाले स्वभाव के रहे हैं। अतः उनका काव्य प्रगतिवादी विचारधाराओं से ओतप्रोत है। उनके काव्य में वर्ग संघर्ष, क्राँति की भावना, सामाजिक चेतना, नास्तिकता के सूत्र, प्रेम, अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव और शिल्प पक्षीय वैशिष्ट्य आदि सभी कुछ व्याप्त है।

शोषितों के प्रति क्रोध, घृणा एवं आक्रोश को अभिव्यक्त करते हुए अज्ञेय पूँजीपतियों पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं–

"डरो मत, शोषक भैया!
पीलो,
मेरा रक्त ताजा है, मीठा है, हृदय है
पीलो शोषक भैया : डरो मत।''[1]

प्रस्तुत पंक्तियों के माध्यम से कवि ने इस भाव को व्यक्त किया है की पूँजीपतियों में मानवता नाम का लेश भी शेष नहीं है।

"लौटे यात्री का वक्तव्य" शीर्षक कविता में शोषक वर्ग के प्रति अपनी आकुंठा को अभिव्यक्त हुए अज्ञेय कहते हैं –

"यही दूँसरे पूछ, नाम लेते हैं कितना
लहू देह में बाकी होगा :
यही तीसरे, आँक रहे जो
मांसपेशियों में कितना है श्रम–बल!"[2]

प्रगतिवादी काव्य में समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, शोषण, जीर्ण–शीर्ण रूढ़ीवादी परंपराओं का विनाश करने के लिए निरंतर क्राँति का आवाह्न देखा जा सकता है। अज्ञेय ने भी अपने काव्य में विभिन्न स्थलों पर क्राँति और विद्रोह भरे स्वर में समाज को संबोधित किया है, जिससे जीर्ण–शीर्ण रूढ़ियों एवं परंपराओं का समूल विनाश हो सके। इन्हीं भावनाओं से ओतप्रोत होकर वह इस प्रकार लिखते हैं–

"आप देगा व्योम श्लक कुहासे का जाल
कड़ी–कड़ी छिन्न होगी तारकों की माल
मेरे माया लोक की विभूति बिखर जाएगी।
इसी बीच किरण मर जाएगी।"[3]

"मत मांग" कविता में कवि अज्ञेय बड़े ही आक्रोश के साथ कहते हैं कि–

"मेरा वदरहस्त देता है–
आग, आग, बस आग।"[4]

प्रगतिवादी काव्य में सामाजिक चेतना देखने को मिलती है, वस्तुतः प्रगतिवादी कवि वर्गहीन समाज की स्थापना के लिए कटिबद्ध है। वह जाति, वर्ग, धर्म आदि के नाम पर स्थापित सकुंचित घेरों को तोड़कर, मानवता के आधार पर, नवीन समाज की स्थापना करना चाहता है। फलस्वरूप प्रगतिवादी कवि सामाजिक उलझनों को समझने के प्रति पूर्ण रूप से जागरूक है। अज्ञेय ने अपने काव्य में सामाजिक चेतना के महत्व देते हुए कहते हैं –

"जिसने पर दिया अपना है दान
उसने अपने को, अपने साथ सब को
अपनी सर्वमयता को निबाहा है।"[5]

कवि ने अपने काव्य में सामाजिक चेतना को, स्वतंत्रता की खोज के रूप में स्थापित किया है। उन्होंने प्रत्येक मानव के लिए स्वतंत्र वातावरण में स्वच्छंद विचरण करने की कल्पना की है।

प्रगतिवादी काव्य प्रेम को सर्वोपरि स्थान दिया गया है, जो परिमित, आंतरिक तथा साध्य न होकर व्यापक, बाह्य और साधन है। वह कोमल तंतु रूप प्रेम के दृढ़ आश्रय का अवलंब अनंत पार करने की इच्छा रखते हैं, वह कहते हैं–

"पर मैं अखिल विश्व का प्रेम खोजता फिरता हूँ
क्योंकि मैं उसके असंख्य हृदयों का गाथागार हूँ।"[6]

प्रकृति नटी के माध्यम से कवि के हृदय में विश्व प्रेम की भावना का उदय हुआ है, अतः संपूर्ण जगत् के प्रति रागात्मक संबंधों के आयामों का ज्ञान प्राप्त करते हुए कवि कहता है–

"दूर कहीं पर रेल कूकती,
पीपल में परभृता हूकती
स्वर तरंग का यह सम्मिश्रण
जाने जगा–जगा क्यों जाता
उर में विश्व–स्नेह का ज्ञान।"[7]

प्रेम के आदर्श और विराट स्वरूप के दर्शन कवि की असाध्य वीणा नामक कविता में दृष्टिगोचर होते हैं, इस कविता के अनुसार वह पहला व्यक्ति था; जिसने असाध्य वीणा में प्राण स्वरों को झंकृत कर दिया था। उस संगीत को सबने सुना जिस पर सभी झूम उठे रानी ने भी उसे सुना और वह प्रतिज्ञा करती है–

"आलोक एक है
प्यार अनन्य! उसी की
विद्युल्लता घेरती रहती है उस रस भार मेघ को,
थिरक उसी की छाती पर, उसमें छिपकर सो जाती है।
आश्वस्त, सहज विश्वास–भरी
रानी
उस एक प्रयार को साधेगी।"[8]

कवि के इस अभिव्यक्तिकरण को ही उसके लौकिक प्रेम का अध्यात्म धरातल पर उदात्तीकरण कहा जा सकता है।

प्रगतिवादी काव्यधारा नास्तिक भावनाओं की छाप से भी मुक्त नहीं रही, अर्थात प्रगतिवादी काव्य में ईश्वर के प्रति आस्था, धर्म, भाग्य, आदि भावनाओं का चित्रण भी देखने को मिलता है। धार्मिक संकीर्णताएँ और

रूढ़िवादिता समाज को चारों ओर से घेरे हुए दिखाई देती है। "आत्मनेपद" में अज्ञेय लिखते है, "नैतिक मूल्यों की समस्या और भी विकट इसलिए हो गई कि, प्राचीन शास्त्रीय, धार्मिक अथवा ईश्वर–संभूत धार्मिकता इस युग में क्रमशः क्षीण होती जा रही है, और आज नैतिकता का आधार एक मानव–संभुत नीति में खोजा जा रहा है, जो दायित्व अब तक ईश्वर या धर्म पर था, वह अब मानव ने स्वयं ओढ़ लिया है।" उनकी इस विचार धारणा में चार्वाक दर्शन का सूत्रपात हो जाता है।

''इस विकास गति के आगे है
कोई दुर्दम शक्ति कहीं
जो जग की स्रष्टा है, मुझको
तो ऐसा विश्वास नहीं!''[9]

असफल मानव ईश्वर के प्रति विद्रोह के स्वर गुंजायमान कर देता है, जिसे अभिव्यक्त करते हुए कवि कहते हैं –

"कहा गया वह
जिसने सब कुछ को
ऋतु के सांचे था बैठाया?
तथा
तुमसे पायी ज्योति शिक्षा के शुभ वृत्त में
को अपना
पलपल जलता जीवन जीया
पर तुमने–तुम गुरू, सखा, देवता
तुमने क्या किया"?

प्रस्तुत पंक्तियों में प्रगतिवादी नास्तिकता का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

प्रगतिवादी काव्य में अभिव्यक्ति पक्ष की अपेक्षा, अनुभूति पक्ष को अत्यधिक महत्व दिया है। फलस्वरूप प्रगतिवादी कवि का भाव है की कला–कला के लिए नहीं बल्कि कला जीवन के लिए है। अज्ञेय के काव्य में भी यह विचारधारा देखने को मिलती है, वह कहते हैं –

"अपने से बाहर आने को छोड़
नहीं आवास दूसरा
भीतर भले स्वयं साईं बसते हों"![10]

अन्य कवियों के समान ही अज्ञेय ने भी समाजवादी यथार्थ के चित्रण के ऊपर अपनी दृष्टि को केंद्रित किया है। उन्होंने जीवन के कटु सत्य को मार्क्सवादी आईने में रखकर देखने का प्रयत्न किया है। जहाँ कहीं भी उनके काव्य में यह भाव झलकते हैं, उनका काव्य प्रगतिवादी होने लगता है। "हरी घास पर क्षण भर" काव्य संग्रह में वे लिखते हैं –

"क्रौंच बैठा हो वाल्मीकि पर
तो मत समझ यह अनुष्टुप बाँचता है, संगिनी के स्मरण को
जान ले, वह दीमकों की टोह में है।"

अज्ञेय के काव्य में अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव भी देखने को मिलता है। उनकी कविता 'हिरोशिमा' इसका सशक्त उदाहरण है। जिसमें मानव जाति के महानाश के बाद एक मर्मस्पर्शी चित्र को कवि ने खींचने का प्रयास किया है–

"छायाएँ मानव–जन की
दिशाहीन
सब ओर पड़ी.....
काल–सूर्य के रथ के
पहियों के ज्यों आरे टूट–टूट कर बिखर गए हों
दसों दिशा में।"[11]

इस प्रकार प्रगतिवादी काव्य में जीवन मूल्यों का यथार्थ चित्रण देखने को मिलता है, जिसमें अज्ञेय पूर्णतया सफल हुए हैं, अज्ञेय के काव्य में प्रगतिवादी काव्यधारा की समस्त विषय विशेषताएँ देखने को मिलती है।

उनके काव्य में प्रगतिवादी विशेषताओं के साथ में जिस प्रकार भावपक्ष अपने पूर्ण स्वरूप को लेकर उभरा है। उसी प्रकार उनके काव्य का शिल्प पक्ष भी सरलता के अनुरूप सहज ही रहा है। शिल्प की दृष्टि से उनका काव्य नवीनता लिए हुए है, उन्होंने काव्य में रूढ़िवादी अलंकारों को छोड़कर नवीन उपमानों, प्रतीकों और रूपकों को प्रस्तुत किया है। अज्ञेय अपनी कविता 'रात और दिन' में पक्षियों के डैनो का अवलंब लेकर, शोषित वर्ग की अतृप्त कामनाओं को प्रदर्शित करने का प्रयास किया है–

"सब माँगें पंछी–सी
डैनों में सिर खौंस जहाँ पर
अपने ही में खो जाती है।"[12]

एक स्थान पर कवि अज्ञेय 'झिल्ली' शब्द प्रयोग करते हुए समाज में व्याप्त वैज्ञानिक यांत्रिकता के बीच घुटन में श्वास–निःश्वास लेते हुए, विवश मानव जीवन की परिस्थितियों का चित्रण करते हुए कहते हैं–

"घनी कुछ हो आने दो
रासायनिक धुँध के इस चीकट कंबल की नई घुटन को
मानव का समूह–जीवन इस झिल्ली में ही पनप रहा है।"[13]

भाषा शैली की दृष्टि से कवि ने अपने काव्य में प्रगतिवादी विशिष्टताओं के अनुरूप ही रस, छंद, अलंकार का प्रयोग किया है। उनके काव्य में प्रगतिवादी कवियों के समान ही मुक्त छंद योजना है। शैली गीतात्मक है। प्रगतिवादी कवियों से प्रभावित होने के कारण उन्होंने खड़ी बोली को ही अपना विषय बनाया है। कुछ स्थानों पर उनकी भाषा तत्सम् शब्द प्रधान हो गई है और आंचलिक शब्दावली भी युक्त है।

निष्कर्ष –

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अज्ञेय के काव्य पर प्रगतिवादी काव्यधारा का अधिकांशतः प्रभाव परिलक्षित होता है लेकिन फिर भी पूर्ण रूप से उन्हें प्रगतिवादी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उनका अपना वक्तव्य व्यक्ति स्वातंत्र्य को मार्क्सवाद से अधिक गाह्य और वरेण्य मानता है। वस्तुतः कह सकते हैं की अज्ञेय जैसे महानायक किसी वाद के घेरे में नहीं रह सकते, युग चेतनाओं से संपृक्त होकर ही प्रत्येक वाद उनमें समाया हुआ दिखाई देता है।

संदर्भ –

[1]संपादक कृष्णदत्त पालीवाल – अज्ञेय रचनावली (खंड 1), पृष्ठ 322
[2] संपादक कृष्णदत्त पालीवाल – अज्ञेय रचनावली (खंड 2), पृष्ठ 43–44
[3] वेद प्रकाश जुनेजा – अज्ञेय और सर्जना के क्षण, पृष्ठ 45
[4] वेद प्रकाश जुनेजा – अज्ञेय और सर्जना के क्षण, पृष्ठ 45
[5] वेद प्रकाश जुनेजा – अज्ञेय और सर्जना के क्षण, पृष्ठ 46
[6] संपादक कृष्णदत्त पालीवाल – अज्ञेय रचनावली (खंड 1), पृष्ठ 188
[7] वेद प्रकाश जुनेजा – अज्ञेय और सर्जना के क्षण, पृष्ठ 48
[8] विद्यानिवास मिश्र – अज्ञेय, पृष्ठ 112
[9] संपादक कृष्णदत्त पालीवाल – अज्ञेय रचनावली (खंड 1), पृष्ठ 209
[10] वेद प्रकाश जुनेजा – अज्ञेय और सर्जना के क्षण, पृष्ठ 48
[11] अज्ञेय – दूसरा सप्तक–हिरोशिमा, पृष्ठ 155
[12] अज्ञेय – दूसरा सप्तक–रात और दिन, पृष्ठ 143
[13] वेद प्रकाश जुनेजा – अज्ञेय और सर्जना के क्षण, पृष्ठ 52